लघु एवं सीमांत कृषकों के आय संवर्धन में कृषि साख, विस्तार सेवाएं एवं कृषि आदानों की आपूर्ति द्वारा बाज़ार आधारित कृषि अर्थव्यवस्था से संबद्ध करने में कृषक उत्पादक संगठनों की भूमिका

डॉ. अरुण रमेश जोशी
कुलपति, डॉ. सी. वी. रामन विश्वविद्यालय, खंडवा (म.प्र.) भारत

I विस्तृत पृष्ठभूमि

भारत वर्ष के ८३ प्रतिशत से अधिक कृषक लघु एवं सीमान्त कृषकों की श्रेणी में आते हैं। इस विशाल कृषक समुदाय के पास ५० प्रतिशत से अधिक कार्यशील जोत हैं। एक अनुमान के अनुसार लगभग ६३ प्रतिशत कृषक सीमान्त श्रेणी में आते हैं। यह सर्व विदित है कि लगभग ६० प्रतिशत लघु एवं सीमान्त कृषक वर्षा आधारित कृषि पर निर्भर हैं। देश में वर्तमान में ६२० लाख से अधिक कृ षि जोत लघु कृषि जोत के आकार में है, जो कि विश्व की ४५०० लाख लघु कृषि जोत का २० प्रतिशत हैद्य भारत इस सन्दर्भ में चीन के बाद द्वितीय स्थान पर है (ओसका नगयेत, आई ऍफ़ पी आर ई २००५)द्य इस अनुमान से लगभग ५५ दृ ६० करोड़ लघु एवं सीमान्त कृ षक परिवार प्रत्यक्ष रूप से रोजगार एवं जीवन यापन हेतु कृषि पर निर्भर हैं। देश में कृषि जोतों के लगातार विखंडन से प्रत्येक वर्ष लगभग १५ से २० लाख लघु एवं सीमान्त कृषि जोतों की बढ़ोतरी हो रही है।

यह सर्व विदित है की अनेक ढांचागत कारणों तथा सीमित संसाधनों के कारण देश के किसानों का एक छोटा वर्ग ही कृषि विस्तार सेवाओं की परिद्धि में आता है। ज्ञात हो कि (एन एस एस ओ २००५ के सर्वेक्षण अनुसार) देश के मात्र ६ प्रतिशत कृषक ही शासन द्वारा प्रदत्त कृषि विस्तार सेवाओं की परिधि में आते हैं, जबकि १६ प्रतिशत कृषक कृषि सम्बन्धी सूचनाओं के लिए निजि कृषि आदान विक्रेताओं पर निर्भर हैं एवं ४७ प्रतिशत लघु एवं सीमान्त कृषक आज भी कृषि साख के लिए निजि साहूकारों पर निर्भर हैं। केवल १५ प्रतिशत इस वर्ग के कृषक बैंकों से ऋण प्राप्त कर पाते हैं । (एन.एस. एस. ओ, २००३)।

एक शोधपत्र में उल्लेखित है की लघु एवं सीमान्त कृषक को अनेक प्रयासों से यदि प्रतियोगी बनाने की चेष्टा भी की जाए तो भी इन लघु जोतधारी कृषकों को निर्धनता से मुक्त करना मुश्किल है क्योंकि सूचनाओं की असमानता, अनेक स्तरों पर सहयोग की कमी विशेषकर वित्तीय संस्थानों की सीमित उपलब्धता जैसे अनेक कारण इन छोटे उत्पादकों को बाज़ारों से असम्बद्ध करते हैं।

II कृषि उत्पाद विपणन समितियॉ

देश में कृषि उत्पाद विपणन समितियों (कृषि उपज मण्डियों) की उपस्थिति के कारण कुछ सीमा तक शोषणकारी ताकतों से कृषकों के हितों की रक्षा करने में सफलता प्राप्त हुई है। यद्यपि, कृषि उपज मंडियां खुले बाजारों में सीमित प्रतियोगी होने से कम प्रभावशाली साबित होती रही हैं, साथ ही दूरस्थ स्थानों तक इन की पहुँच भी सीमित हैं। औसतन एक कृषि उपज – मंडी द्वारा नियंत्रित बाजार के रूप में लगभग ४५४ वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल की परिधि में कार्य क्षेत्र का फैलाव है। परिणाम स्वरूप एक तिहाई लघु एवं सीमान्त कृषक ही इन कृषि उपज मंडियों की सीमाओं में आते हैं एवं नियंत्रित बाज़ारों की सेवाओं का लाभ ले पाते हैं। बाकी दो तिहाई लघु एवं सीमान्त कृषक आज भी असंगठित अनौपचारिक बाज़ारों एवं शोषणकारी ताकतों के हाथ में कृषि विपणन हेतु मजबूर हैं। आदर्श कृषि उपज मंडी अधिनियम द्वारा प्रतिपादित सिध्दांतों के अनुसार कृषि बाजारों में क्रेता एवं विक्रेता उन्मुक्त व्यवस्था के अंतर्गत मंडी परिसरों के बहार भी खुला व्यापार कर सकते हैं अपितु अनेक राज्य सरकारों द्वारा इस व्यवस्था को मान्य नहीं किया गया है, साथ ही जिन राज्य सरकारों ने मान्य भी किया है, वो या तो अपूर्ण है। या नियमों के अंतर्गत सीमित और प्रभावहीन कर दिये गए हैं। इस प्रकार संगठित एवं नियंत्रित प्राथमिक कृषि बाजारों का दायरा सीमित है। फलस्वरूप बिचौलिए इस व्यवस्था का लाभ उठा कर अतिरिक्त लाभ अर्जित करते हैं। उदाहरण के लिए सहकारी क्षेत्र ३६ः रासायनिक उर्वरक वितरण करता है, किन्तु अनेक अनिश्चितताओं के कारण कृषि आदानों की आपूर्ति में बड़ी विषमताएं व्याप्त हैं एवं उर्वरकों की काला बाजारी होती रहती हैं।

III वैश्वीकरण

वैश्वीकरण, बढ़ते हुए घरेलु माध्यम वर्ग की बढती हुई खाद्यान्न आवश्यकता, वैविध्यपूर्ण खाद्य रुचि एवं वैश्विक बाजारों की भूमिका ने कृषि उपज मूल्य श्रंखला में वैश्विक निगमित संस्थाओं अंतर राष्ट्रीय कम्पनियों की रूचि जाग्रत की है। वर्तमान में ऐसे अनेक उदाहरण द्रष्टिगत हैं जहाँ, बड़े निगमित निकायों (कॉर्पोरेट घरानों) के प्राथमिक उत्पादकों, प्रक्रियाकर्ताओं एवं खुदरा विक्रेताओं के साथ सीधे व्यवसायिक सम्बन्ध विकसित हुए हैं। यद्यपि अधिकतर उदाहरणों में प्राथमिक उत्पादक बड़े व मध्यम वर्गीय कृषक ही संबद्ध हैं, इनमे लघु एवं सीमान्त उत्पादकों की संख्या प्रायः नगण्य है। मूलतः विखंडित उत्पादन प्रणाली, न्यून प्रति इकाई अधिशेष उत्पादन एवं गुणवत्ता में कमी जैसे अनेक कारण इन लघु उत्पादकों को सीधे संगठित बाज़ारों से संबद्ध होने में अड़चन पैदा करते हैं एवं इस प्रकार इन लघु उत्पादकों को न तो इन बाज़ारों का लाभ मिल पाता है न ही लाभकारी मूल्य प्राप्त होते हैं।

वैश्विक जनसँख्या वृद्धि एवं जलवायु परिवर्तन जैसे सामयिक विषयों पर वर्तमान चर्चा ने भूमंडलीय ताप (ग्लोबल वार्मिंग) के साथ खाद्यान्न उत्पादन, उर्जा उत्पादन एवं संसाधनों की सीमितता के प्रति जन चेतना जाग्रत की है। समय की मांग को देखते हुए वैश्विक स्तर पर उपभोक्ताओं को अधिक जिम्मेदार एवं संवेदनशील

उपभोग हेतु प्रेरित किया जा रहा है। बहुहिताधारी गोलमेज परिषदों के गठन जिनमे उत्पादक, व्यवसाय एवं उद्योग के प्रतिनिधि, स्वयंसेवी संगठन आदि) स्वेच्छ से सम्मिलित हो कर जिम्मेदार कृषि उत्पादन, विपणन, प्रक्रिया पर एक मत हो कर प्रयत्नशील हैं। उदाहरण स्वरूप सोयाबीन की जिम्मेदार खेती, गन्ने की जिम्मेदार खेती, कपास की जिम्मेदार खेती, पामतेल की जिम्मेदार खेती आदि कुछ महत्वपूर्ण सफल प्रयोग हैं। ये सभी प्रयास जन संवेदनशील, पर्यावरण हितैषी एवं आर्थिक रूप से समतापूर्ण प्रयोग सिद्ध हो रहे हैं, साथ ही इन जिम्मेदार कृषि उत्पादन प्रणालियों से कार्बन उत्सर्जन में कमी कर पुनर्भरण की असीम संभावनाएँ हैं।

वर्तमान में केंद्र शासन द्वारा सीधे विदेशी निवेश को खुदरा बाजारों में आमंत्रित करने के निर्णय से अधोसंरचना विकास, कृषि उत्पाद प्रसंस्करण क्षेत्र के विकास एवं मूल्य श्रृंखला विकास में सहायक होगी । इस परिदृश्य में कृषक उत्पादक संगठन इन उभरते अवसरों को लघु एवं सीमान्त कृषकों के हितों में परिवर्तित कर शोषणकारी शक्तियों से उनका संरक्षण करने में समर्थ होंगे।

लघु एवं सीमान्त कृषकों की प्रमुख समस्याएँ निम्नानुसार हैं

(क) घटते भू – संसाधन, बड़ती उत्पादन लागत, एवं घटता लाभ।

(ख) कृषि उत्पादन में महत्वपूर्ण आदान यथा कृषि साख, सिंचाई जल आपूर्ति, बिजली, उन्नत बीज, उर्वरक, कृषि रसायन, तकनिकी मार्गदर्शन आदि की समयबद्ध उपलब्धता में कठिनाई।

(ग) कृषि उपज विपणन की विखंडित मूल्य श्रंखला, एकाधिकारिक व्यवसाय, मूल्य संवर्धन के सीमित अवसर।

(घ) संविदा एवं सौदा शक्ति की कमी, कृषि व्यवसाय में किये गए निवेश पर न्यून प्राप्तियाँ।

(च) वर्तमान त्रुटिपूर्ण जोखिम निवारण एवं शमन प्रणाली विशेषतया फसल बीमा योजना के प्रति लघु एवं सीमान्त कृषकों में व्याप्त असंतोष इस ओर इंगित करता है की इस वर्ग के कृषकों की मौसम जनित जोखिम वर्तमान प्रणाली में पूर्ण रूप से सुरक्षा प्रदान करने में अक्षम है।

(छ) केन्द्रीय स्तर पर कृषि विकास योजनाओं में लघु एवं सीमान्त कृषक वर्ग को लक्षित करने में उदासीनता आदि।

IV वर्तमान स्थिति

यह अब स्वतः स्पष्ट है की उपरोक्त लिखित समस्याओं का प्रभावी ढंग से निदान करना है तो कृषक उत्पादक संगठनों की भूमिका महत्वपूर्ण है। सदस्यता आधारित प्राथमिक कृषक उत्पादक संगठन उक्त समस्याओं एवं चुनौतियों का सामना पूर्ण दृढ़ता के साथ कर सकतें है तथा अपने सदस्यों को संबल प्रदान कर सकतें है।

वर्तमान के सीमित अनुभव के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्राथमिक कृषक उत्पादक संगठन उनकी संयुक्त शक्ति के माध्यम से अनेक वित्तीय एवं गैर वित्तीय आदानों, सेवाओं, युक्ति संगत तकनीकों के माध्यम से सौदा लागत का युक्तिकरण, उच्च मूल्य बाजारों में प्रवेश, निजी एवं सार्वजनिक क्षत्रों में समानता पूर्ण साझेदारी करने में सक्षम हो सकते हैं।

पूर्व में अनेक प्रकार से तथा संस्थागत प्रारूपों में कृषकों को मूल्य श्रंखला के साथ समन्वित करने के प्रयास किये गए हैं। सर्वाधिक प्रचलित संस्थागत प्रारूप उत्पादक सहकारिताओं को मान्य है, जो अपने उत्पादक सदस्यों को सामूहिक संगठन के रूप में शक्ति प्रदान करती हैं। इस प्रकार की सहकारी संस्थाएं में अनेक उद्योगिक क्षेत्रों में विकसित की गयी हैं, यद्यपि सहकारिता का भारतीय अनुभव कुछ अधिक सुखदायी नहीं माना जाता है, ज्यादातर सहकारिताएं राज्याश्रित हैं, एवं व्यवसाय केन्द्रित न हो कर कल्याण केन्द्रित अवधारणा पर कार्यरत हैं।

वर्ष २००२ में भारत शासन द्वारा एक अधिनियम "प्रोडयूसर कम्पनी एक्ट" कंपनी अधिनियम १९५६ के खण्ड ९ अ के अंतर्गत पारित किया गया था। यह अधिनियम डॉ. वाई. के. अलघ समिति की अनुशंसा पर आधारित है। उक्त अधिनियम फरवरी २००३ में प्रभावशील हुआ है। यह अधिनियम एक उपयुक्त संवैधानिक प्रारूप के रूप में मान्य है जो कि लघु एवं सीमान्त प्राथमिक उत्पादकों की विभिन्न सेवाओं को साझा करने जोखिम को साझा करने, पूंजी संचयन, सूचना एवं ज्ञान के आदान – प्रदान हेतु प्रोत्साहित करने के उदेश्य से बनाया गया था। कम्पनी अधिनियम १९५६ में संशोधन के द्वारा प्रोडयूसर कम्पनी अधिनियम लघु एवं सीमान्त तथा साधन विहीन उत्पादकों को बाज़ार में एक संस्था के रूप में बिना सामाजिक सरोकार से समझौता किये व्यावसायिक विश्वसनीयता के साथ उपस्थित होने की योग्यता प्रदान करता है। प्राथमिक उत्पादक कम्पनी अधिनियम सहकारिता के सिधान्तों से ओतप्रोत होते हुए व्यासायिक दृष्टिकोण एवं आधुनिक प्रबन्धन को समाहित करते हैंद्य इन कम्पनियों का गठन अंशधारिता के आधार पर करते हुए अंश के अनुपात में दायित्व निर्धारित किये गए हैं। इन कम्पनियों के दैनिक प्रबन्धन का दायित्व व्यावसायिक प्रबंधकों पर रखा गया है। कम्पनी प्रबन्धन कम्पनी के निदेशक मण्डल के मार्गदर्शन में कार्य निष्पादन करेंगे। निदेशक मण्डल का चयन अथवा चुनाव एक निश्चत समय अवधि के लिए सामान्य सभा के अंश धारकों के बीच से आम सहमति द्वारा किया जाता है। वर्तामान में प्राथमिक उत्पादक कम्पनियाँ कृषकों एवं प्रोत्साहन करता संस्थाओं के मध्य सामान रूप से स्वीकृति प्राप्त कर रही है क्यूंकि यह संगठन ढाँचा पारंपरिक सहकारिता की अपेक्षा अनेक आयामों में परिष्कृत है।

V कृषक उत्पादक कम्पनी गठन, प्रोत्साहन एवं संचालन में अनेक गैर शासकीय संस्थाओं का अनुभव एवं योगदान

मध्य प्रदेश देश का पहला राज्य हैं जहां वर्ष २००५ से कृषक उत्पादक कम्पनियों के गठन को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। आज पर्यंत २३७ से अधिक कृषक उत्पादक कम्पनियों का गठन कर लगभग ३ लाख से अधिक प्राथमिक उत्पादकों को अंशधारक के रूप में संगठित किया गया है। इन सभी पंजीकृत कम्पनियों में लगभग ९०ः से अधिक अंशधारी सदस्य लघु एवं सीमान्त श्रेणी से संबद्ध हैं। अधिकांश पंजीकृत कम्पनियों में ८ दृ १५ तक

निदेशक मण्डल के रूप में प्राथमिक सदस्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन सभी कम्पनियों में एक पूर्ण कालिक मुख्य कार्य पालन अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया है। सभी मुख्य कार्यपालन अधिकारी एवं प्रबन्धन दल के सदस्य उच्च शिक्षित एवं व्यावसायिक दक्षता के साथ पूर्ण प्रशिक्षित हैं। संस्था प्रारंभिक काल में इन नवीन पंजीकृत कम्पनियों को सहयोग, समन्वय एवं सहायता हेतु एक पूर्णकालिक एफपीसी प्रबंधन एवं सहयोग इकाई का गठन किया गया है। यह इकाई सभी पंजीकृत कम्पनियों को संस्थागत विकास, मानव संसाधन विकास, वित्तीय प्रबंधन, तकनिकी प्रबन्धन आदि आयामों में सहायता प्रदान करने के उदेश्य से किया गया है।

सामान्यतः अशासकीय संस्थाओं द्वारा प्रोत्साहित कृषक उत्पादक कंपनियाँ मूल रूप से कृषि उपज का संग्रहण, संविदा कृषि, प्रमाणीकृत बीज उत्पादन, कृषि आदानों का विपणन, वितरण, वित्त व्यवस्था, भंडारण, परिवहन आदि व्यावसायिक प्रक्रियाओं में संलग्न हैं। इन कृषक कम्पनियों के माध्यम से संपार्श्विक सेवाओं, मूल्य अन्वेषण, न्यूनतम समर्थन मूल्य पर कृषि फसल उपार्जन, तत्काल विनिमय, कृषि विस्तार सेवाओं के द्वारा उत्पादकता संवर्धन, प्रमाणीकृत जिम्मेदार कृषि उपज उत्पादन प्रणाली का विकास एवं विस्तार, ग्रामीण स्रोत व्यक्तियों का सेवा प्रदाता के रूप में विकास आदि महत्व पूर्ण व्यवसाय में संलग्न हैं।

ये सभी कृषक उत्पादक कंपनियाँ अपने चतुर्थ वर्ष में रु. २ – ३ करोड़ वार्षिक व्यवसाय का टर्नओवर करने की क्षमता प्राप्त कर लेती हैं। सामान्यतः इस आकर के व्यवसाय से इन कम्पनियों को शुद्ध व्यावसायिक लाभ प्राप्त करने की क्षमता प्राप्त हो जाती है। कम्पनियों द्वारा प्रथम व्यावसायिक वर्ष में ही कृषि वाणिज्य की गतिविधियों से प्रतिवर्ष सामान्यतः रु. ३ – ४ करोड़ तक टर्नओवर प्राप्त हो जाता है।

एक प्रारंभिक अनुमान के अनुसार अंशधारी सदस्य सामान्यतः अनेक प्रकार से इन संस्थाओं से लाभान्वित होते हैं जैसे कि

(क) कृषि आदानो की समयबद्ध एवं उचित मूल्य पर उपलब्धता।

(ख) उचित मूल्य प्राप्तियाँ ।

(ग) कृषि विस्तार सेवाओं के द्वारा कृषि उत्पादन वृध्दि एवं लागत में कटोती।

(घ) अनेक कृषि सेवाओं में समन्वय जैसे कि वित्त, भंडारण, कृषि यंत्रीकरण, उपज श्रेणीकरण, मूल्य संवर्धन आदि।

एक अनुमान के अनुसार इन कम्पनियों के अंशधारकों द्वारा प्रति वित्तीय वर्ष में औसतन रु. ८००० दृ १०००० हजार तक का प्रत्यक्ष एवं परोक्ष नगद या सेवाओं के रूप में अर्जित किया जाता है।

कृषक उत्पादक कम्पनियों की अवधारणा को मूर्तरूप देने के लिए विश्व बैंक द्वारा प्रायोजित म.प्र. गरीबी उन्मूलन परियोजना के अंतर्गत वर्ष २००५ में आरंभ कार्यक्रम किया गया था। उक्त परियोजना के अंतर्गत समरुची समूहों को संगठित कर जिला स्तर पर शीर्ष संगठन के रूप में करने के साथ हुआ था। इस प्रकार परियूजना क्षेत्र के १४ जिलों में १७ कृषक उत्पादक कम्पनियों का गठन किया गया था। कालान्तर में गरीबी उन्मूलन परियोजना की पूर्णता के बाद अनेक वित्त प्रदाता संस्थाओं से सहायता प्राप्त कर इन कम्पनियों को संचालित किया गया।

इन प्रयोगों के माध्यम से एवं राज्य शासन के सहयोग से अनेक नीतिगत परिवर्तन हेतु मार्ग प्रशस्त करने में महती भुमका का निर्वहन कियाद्य म.प्र. शासन द्वारा स्वयं सहायता समूह संवर्धन नीति अंतर्गत इन शीर्ष संगठनों को कार्यशील पूंजी के रूप रु. २५ लाख एवं तीन वर्ष के लिए कम्पनी प्रबंधन हेतु वित्तीय सहायता का प्रावधान किया था। ऐसा करने वाला म.प्र. देश का पहला राज्य था, यद्यपि यह सहायत निधि केवल गरीबी उन्मूलन परिजोजना द्वारा प्रोत्साहित कम्पनियों तक ही सीमित रखी गयी एवं अन्य नवीन कम्पनियों को इस का लाभ नहीं प्राप्त हुआ।

VI महत्वपूर्ण चुनौतियां

कृषि व्यवसाय की परिधि विस्तृत एवं व्यापक हैं। इन नवीन संस्थाओं को व्यवसाय के उपयुक्त अवसर प्रचुर मात्र में उपलब्ध है। इस प्रकार ये नवीन संस्थाएं बगैर अन्य संस्थाओं की व्यवसायिक रुचियों को प्रभावित करते हुए अपना निर्दिष्ट स्थान बना सकती हैं।

सामान्यतः इन नवीन व्यावसायिक संस्थाओं से यह अपेक्षित है कि ये (अ) अपने सदस्य अंशधारी कृषकों की कृषि आदानों की आवश्यकता के अनुरूप पूर्ति करने मे सक्षम हों (ब) अंशधारी कृषक सदस्यों के उत्पादित अधिशेष कृषि उपज को उचित मूल्य पर इच्छित बाज़ार के विक्रय (स) अंशधारी प्राथमिक उत्पादकों को आवश्यक तकनीकी मार्गदर्शन प्रदान करना एवं (द) अंश धारकों को कम्पनी के शासी मण्डल से संबद्ध रखना ताकि अंश धारकों की निर्णय प्रक्रिया एवं कम्पनी संचालन में उचित सहभागिता सुनिश्चित हो सके। अनेक संसाथाओं के अनुभव के आधार पर निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है कि यह कार्य अत्यंत चुनौतीपूर्ण कार्य है। कम्पनी की प्रबंधकीय दल के लिए यह निश्चित ही अधिक चुनौतीपूर्ण हैं क्योंकि सामाजिक सरोकार, समता, सहभागिता, एवं आर्थिक, व्यावसायिक दक्षता के बीच संतुलन अत्यंत ही जटिल कार्य है। यह एक दीर्घकालिक प्रक्रिया है एवं प्रबंधकीय दल की योग्यता एवं दक्षता पर निर्भर करता है। प्रारंभिक अनुभव मिश्रित परिणाम प्रदर्शित करते हैं। किन्ही परिस्थितियों में कुछ कम्पनियों द्वारा आर्थिक एवं व्यवसायिक स्तर पर अच्छा प्रदर्शन किया गया जब कि अन्य के द्वारा सामाजिक स्तर पर तो उपलब्धयां उत्साहवर्धक हैं किन्तु व्यवसायिक आयाम में निराशाजनक प्रतीत होती हैं। अतः निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है की किसी भी समय प्रबंधकीय दल की योग्यता एवं गुणवत्ता से समझौता नहीं किया जाना चाहिए, यही बिंदु कृषक उत्पादन कम्पनी के प्रारूप की सफलता की एकमेव कुंजी है।

इन नवीन संस्थाओं के प्रोत्साहन एवं विकास हेतु सहयोगी संस्थाओं को दीर्घकाल के लिए संसाधन उपलब्ध होना आवश्यक है। सहयोगी संस्थाओं को उनके प्रदर्शन के आधार पर संसाधन देना हितकर होगा किन्तु संसाधनों की

उपलब्धता एवं प्रवाह निर्बाध हो आवश्यक है। प्रायः देखा गया है की सीमित समय के लिए प्राप्त संसाधन आर्थिक प्रगति एवं दक्षता प्रदर्शन की इच्छा के कारण सामाजिक सरोकारों से समझौते के लिए जिम्मेदार होते हैं।

व्यावसायिक दक्षता एवं योग्यता की कमी के कारण प्रायः देखा गया है की सम्वैधानिक प्रक्रीयाओं के अनुपालन में अनेक त्रुटियाँ होती हैं एवं वैधानिक संकट का सामना इन नवीन अल्पसूचित संस्थओं को दंडात्मक कार्यवाही के रूप में करना पड़ता है। इन विशिष्ठ सेवाओं के प्रदाताओं को नवीन संस्थाओं के साथ कार्य अनुभव का अभाव के कारण इन के द्वारा इन नवीन संस्थाओं को उचित मार्गदर्शन नहीं हो पता।

इन नवीन कृषक उत्पादक कम्पनियों के समक्ष वास्तविक चुनौती प्रारंभिक पूँजी निवेश की होती है, अब तक के अनुभव एवं सूक्ष्म निरिक्षण के आधार पर निम्नलिखित कारण महत्व पूर्ण प्रतीत होते है।

(क) वित्तीय संस्थाओं के दृष्टिकोण से ये नवीन कृषक उत्पादक कम्पनियां व्यवसायिक संगठन होने के नाते इन के द्वारा दिए गए वित्तीय प्रस्तावों पर मार्जिन मनी देय होती है किन्तु इन संस्थाओं के पास सीमित वित्तीय संसाधन पूंजी अभाव में इन की वित्तपूर्ति प्रभावित होती है।

(ख) कृषक उत्पादक कम्पनियों को ऋण प्राप्ति हेतु संपार्श्विक राशि की अनुपलब्धता के कारण ऋण प्राप्ति में अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

(ग) वित्तीय उपलब्धियों एवं व्यावसायिक विश्वसनीयता की कमी के कारण वित्तीय संस्थओं के साथ व्यवहार में कठिनाई होती है।

VII संस्थागत प्रयास

इन प्रारंभिक कठिनाइयों से निजात पाने के लिए निम्न लिखित व्यवसाय प्रारूपों का विकास किया गया ताकि आवश्यक संचित कोष (रिज़र्व) एवं विश्वसनीयता अर्जित की जा सके। कम कार्यशील पूंजी की मांग वाले व्यवसाय आरंभ कर कार्यशील पूंजी की कमी का सामना करने के भी प्रयास किये गए हैं।

(क) इन कम्पनियों द्वारा अपने सदस्यों एवं गैर सदस्यों को उत्तम बीज, उर्वरक, एवं अन्य कृषि आदान आपूर्ति कर व्यवसाय विकसित करना। इस हेतु कृषक कम्पनियों द्वारा राष्ट्रीय स्तर की बीज एवं उर्वरक कम्पनियों की डीलरशिप के लिए प्रोत्साहन देना सम्मिलित है।

(ख) इसी प्रकार कृषक उत्पादक कम्पनियों द्वारा कृषि उपज उपार्जन कर एवं सुनिश्चित क्रय योजना के माध्यम से व्यवसाय विकसित किये गये। उत्पादकों से उपार्जन उनके खेतों या खलिहानों पर करके कृषकों की परिवहन एवं भंडारण की समस्याओं का समाधान समग्र रूप से किया गया। कृषक उतपादक कम्पनियों द्वारा क्रेता एवं विक्रताओं से पूर्ण पारदर्शी रूप से व्यवहार कर एक निश्चित राशि लाभ के रूप में अर्जित की गयी।

(ग) कुछ कृषक उत्पादक कम्पनियों द्वारा शासन की भंडारगृह रसीद के बैंक धीरान (रेहान) द्वारा पूंजी प्राप्त की गयी। इस प्रक्रिया का उपयोग बीज उत्पादन व्यवसाय हेतु किया गया। बैंक द्वारा प्रदत्त ८०: राशी का उपयोग किसानो को देयक के रूप में किया गया। बीज उत्पादन व्यवसाय में २५ से ३०: राशि व्यवसायिक लाभ के रूप में होती है, अतः यह लाभकारी व्यवसाय है।

(घ) कृषि यांत्रिकी कम्पनियों की डीलरशिप के माध्यम से एवं कस्टम सेवा केन्द्रों द्वारा भी व्यवसाय कर रही हैं।

VIII निष्कर्ष

अब तक के अनुभव से यह प्रतीत होता है कि कृषक उत्पादक कम्पनियों का विकास एकल विकास योजना के रूप में करना कठिन होता है, किन्तु कृषि आजीविका परियोजानों के साथ यदि समन्वित प्रयास किया जावे तो शायद परिणाम सुनिश्चित प्राप्त हो सकते हैं।

कृषक उत्पादक कम्पनियों के वृहद स्तर पर विकास हेतु प्रयास की प्रक्रिया के मानकीकरण द्वारा गति प्रदान की जा सकती है, विश्वविद्यालय द्वारा अपने स्तर पर एक उच्च स्तरीय विशेषज्ञ दल गठित कर इस कार्य को पूर्ण दक्षता के साथ संपन्न किया जा रहा है।

अतः अनुभव के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि इस प्रकार के संगठन औपचारिक, एक निश्चित सदस्यता वाले व्यवसाय स्वरूप वाले होना आवश्यक है। उद्योग एवं व्यवसाय जगत के साथ औपचारिक व्यवसायिक संबंधों हेतु निश्चित दिशा में प्रयास किये जाना आवश्यक हैं। प्रायः देखा गया है १२०० दृ १५०० सदस्य एक अच्छी शुरुवाती संख्या है।

अब तक किये गए संस्थाओं पर निरूपित अनुसन्धान से यह प्रतीत होता है कि कृषक उत्पादक कम्पनियां उचित लागत माध्यम एवं अपने अंशधारियों के लिए सुनिश्चित व्यवसाय कर लाभ अर्जित कर सकती हैं। साथ ही थोड़ी कल्पनाशीलता से यह प्रयास सामाजिक, संस्थागत, आर्थिक एवं राजनैतिक विकास में मील का पत्थर साबित हो सकता है। अंत में यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि बाजारों को लघु एवं सीमान्त कृषकों के प्रति संवेदनशील किया जा सकता है एवं ग्रामीण आजीविका एवं कृषि विकास का मार्ग प्रशस्त किया जा सकता है।